माननीय न्यायमूर्ति जे. वी. गुप्ता, के समक्ष

संतोख सिंह, अपीलकर्ता

बनाम

लिज्जा राम और एक अन्य, - उत्तरदाता

1977 की नियमित द्वितीय अपील संख्या 364

15 मई, 1986

पंजाब पूर्व-अनुभव अधिनियम (1913 का 1) - धारा 15 (1) (क) - चौथे पक्ष के रूप में- पूर्व-अनुभव का दावा डिक्री किया गया क्योकि वादी संयुक्त खाते में सह-हिस्सेदार था जब तक कि डिक्री की अवधि समाप्त नहीं हो जाती थी - वेन्डीज/निर्णय-देनदारों की पहली अपील खारिज कर दी गई थी और बाद में दूसरी अपील दायर की गई थी और उच्च न्यायालय में लंबित है - वादी/डिक्री-धारक ने दूसरी अपील के लंबित होने के दौरान वाद संपत्ति के विभाजन के लिए और अन्य भूमि के लिए आवेदन किया है -मंजूरी दे दी और डिक्री-धारक को वाद भूमि के अलावा अन्य भूमि को अपने हिस्से के रूप में आवंटित किया गया - पूर्व-निर्धारक संयुक्त खाते का सह-हिस्सेदार नहीं रहा- वेन्डी-डिक्री-धारक द्वारा रिकॉर्ड पर रखा गया विभाजन का तथ्य - लंबित अपील पर संयुक्त खाता के विभाजन का प्रभाव - कहा गया - पूर्व-निर्धारक - क्या अभी भी मुकदमा भूमि में सह-हिस्सेदार होने के रूप में पूर्व आदेश का हकदार है।

अदालत ने कहा कि पंजाब प्री-एम्पोशन एक्ट, 1913 की धारा 15 (1) (ए) के तहत सह-हिस्सेदार होने के नाते पूर्व-अनुभव के बेहतर अधिकार का दावा करने वाले वादी ने पूर्व अनुभव का अपना बेहतर अधिकार खो दिया क्योंकि अपील के लंबित रहने के दौरान इसका विभाजन हो जाने के बाद, वह खाते में सह-हिस्सेदार नहीं रहा। अपील स्तर पर न्यायालय बाद की घटनाओं पर विचार करने का हकदार है और यदि अपील के लंबित रहने के दौरान, वादी-पूर्व-मूल्यांकनकर्ता ने अपने स्वयं के कार्य द्वारा सह-हिस्सेदार होने के नाते बिक्री को रोकने का अधिकार खो दिया है और ऐसा डिक्री-धारक मुकदमा भूमि में सह-हिस्सेदार होने के नाते प्री-एम्प्शन डिक्री का हकदार नहीं है।

(पैरा 6 और 9)

करनाल के वरिष्ठ उप-न्यायाधीश की अदालत की बढ़ी हुई अपीलीय शक्तियों के साथ दिनांक 22 फरवरी, 1977 की डिक्री से नियमित द्वितीय अपील में 14दिसम्बर, 1972 को कैथल के उप-न्यायाधीश द्वारा किए गए निर्णय की पुष्टि करते हुए वाद की भूमि के पूर्व-मूल्यांकन के माध्यम से कब्जा करने के लिए वादी के वाद का निर्णय लिया गया था जिसमे 15 जनवरी, 1973 तारीख को या उससे पहले ज़रे-पंजाम की राशि , अगर पहले जमा की गई है को कम करके राशि 18,882.50 का भुगतान करने पर यह आदेश दिया कि सफल ना होने पर वादी के मुकदमे को खारिज कर दिया जाएगा और किसी भी मामले में, पार्टियों को अपनी लागत वहन करने के लिए छोड़ दिया जाएगा।

सी.एम. 1986 का 1253-C:

आदेश 41, नियम 27 के तहत आवेदन, जिसे सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पढ़ा जाता है, प्रार्थना करता है कि इस आवेदन को अनुमति दी जाए और इसके सही अनुवाद के साथ अनुलग्नक 'पी -1' को मामले के रिकॉर्ड पर रखने की अनुमति दी जाए।

यह भी प्रार्थना की जाती है कि विभाजन को मंजूरी देने वाले 17जनवरी, 1983 के कलेक्टर गुहा के आदेश और उसके बाद 16 मई, 1983 को तैयार किए गए 'नक्शा जीम' दस्तावेज यदि वादी-प्रतिवादी द्वारा स्वीकार नहीं किए जाते हैं, तो उनसे तलब किए जाएं और अपील की अंतिम सुनवाई के समय इन दस्तावेजों पर विचार करने की अनुमति दी जाए।

अपीलकर्ता की ओर से वकील- एस. के. अग्रवाल के साथ एन. सी. जैन।

प्रतिवादी की ओर से वकील- सुखदेव सिंह के साथ एच. एल. सरीन।

निर्णय

न्यायमूर्ति जे. वी. गुप्ता,

1. यह वेंडी की प्री-एम्प्शन के दावे में दूसरी अपील है जिसके खिलाफ नीचे दिए गए दोनों न्यायालयों द्वारा मुकदमा तय किया गया है।

2. वादी-प्रतिवादी लज्जा राम ने विक्रेता के भाई के बेटे के साथ-साथ खाता में सह-हिस्सेदार होने के नाते पूर्व-अनुभव के बेहतर अधिकार का दावा किया/ नीचे दिए गए दोनों न्यायालयों द्वारा समवर्ती रूप से यह पाया गया है कि वादी खाता में सह-हिस्सेदार था, हालांकि साथ ही यह भी पाया गया कि वह विक्रेता के भाई का बेटा था। प्रतिवादी की यह दलील कि वह वाद भूमि पर किरायेदार था, को खारिज कर दिया गया। नतीजतन, वादी के मुकदमे का फैसला सुनाया गया था। निचली अपीलीय अदालत ने वेंडी-डेफेनडेंट द्वारा दायर अपील को खारिज कर दिया था। उसी से असंतुष्ट, वह इस न्यायालय में दूसरी अपील में आया है।

3. जहां तक विक्रेता के भाई के पुत्र होने के नाते पूर्व अधिकार का दावा करने के आधार का संबंध है, यह अब *आत्म प्रकाश* बनाम *हरियाणा राज्य* [1] उच्चतम न्यायालय के फैसले के मद्देनजर वादी के लिए उपलब्ध नहीं है। हालांकि, वादी *खाता* में सह-हिस्सेदार भी पाया गया था, इसलिए वह अभी भी पूर्व-अनुभव के लिए मुकदमा दायर कर सकता था। इस अपील के लंबित रहने के दौरान, प्रतिवादी ने अतिरिक्त साक्ष्य को रिकॉर्ड पर रखने की अनुमति के लिए नागरिक प्रक्रिया संहिता के आदेश XLI नियम 27 के तहत एक आवेदन दायर किया। इसके पैराग्राफ 4 और 5 में कहा गया है कि इस न्यायालय में अपील के लंबित रहने के दौरान, वादी ने विवाद में भूमि सहित राजस्व न्यायालयों के समक्ष विभाजन की कार्यवाही शुरू की और विभाजन के माध्यम से अन्य सह-हिस्सेदारों से

[1] 1986-1 पी.एल.आर.

भूमि के अपने हिस्से को अलग करने की मांग की। कलेक्टर ने 17 जनवरी, 1983 के आदेश के *तहत* विभाजन को मंजूरी दे दी और 16 मई, 1983 को इसके अनुक्रम के रूप में "*नक्शा जीम*" तैयार किया गया। विभाजन की कार्यवाही पूरी हो चुकी है और समाप्त हो चुकी है। 48 *कनाल की* भूमि आयत संख्या 11, *किला* नंबर 11 में शामिल I, 2, 9, 10 और 12 और आयत संख्या 7, *किला* नंबर 22 को विवादित भूमि के बदले अपीलकर्ता को आवंटित किया गया है, जिसके बारे में डिक्री पूर्व-आवेदक के पक्ष में पारित की गई थी। इसके विपरीत, विभिन्न आयतों और *किला* नंबरों में से कुछ में 121 *कनाल* 3 *मरला* की भूमि प्री-ऐम्प्टर करने वाले को आवंटित की गई थी। अपील करने वाले के अनुसार, इन सभी तथ्यों को वादी-पूर्व-याचिकाकर्ता ने इस अदालत में दायर 1983 के अपने आवेदन सिविल विविध संख्या 2405-सी में स्वीकार किया है। प्रतिवादी-वेंडी की ओर से उक्त आवेदन का जवाब दाखिल किया गया है। अपीलकर्ता द्वारा 41 नियम 27 सी.पी.सी. के तहत किए गए आवेदन के पैराग्राफ 4 और 5 में लगाए गए आरोपों से इनकार नहीं किया जाता है। उत्तर के पैरा 6 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि भले ही अपील की प्रक्रिया के दौरान विभाजन के तथ्य को स्वीकार कर लिया जाए और साबित कर दिया जाए, लेकिन इसका किसी भी तरह से अपील के गुण-दोष पर कोई कानूनी प्रभाव नहीं पड़ता है। इन परिचर्चाओं में इस अपील में तय किया जाने वाला मुख्य प्रश्न यह है कि वादी-पूर्व-मूल्यांकनकर्ता के अधिकारों पर क्या प्रभाव पड़ता है, जो इस अपीलीय स्तर पर *खाता* में सह-हिस्सेदार नहीं था और क्या इन परिस्थितियों में, पूर्व-मूल्यांकन के लिए उसका मुकदमा खारिज कर दिया जाना चाहिए, भले ही यह अदालत द्वारा तय किया गया था कि वह *खाता* में सह-हिस्सेदार है या फिर भी वह उक्त डिक्री का हकदार है क्योंकि उसने ट्रायल कोर्ट द्वारा उसके पक्ष में डिक्री पारित होने की तारीख तक उस अधिकार को बनाए रखा है.

4. वेंडी-अपीलकर्ता के वकील के अनुसार, मामले का अंतिम निर्णय होने तक पूर्व-समर्थक को पूर्व-अनुभव के अपने अधिकार को बनाए रखना था क्योंकि अपील वाद की निरंतरता है और यदि अपील के लंबित रहने के दौरान पूर्व-मूल्यांकन का अधिकार खो गया था,जिसके आधार पर मुकदमा दायर किया गया था, फिर, मुकदमा विफल होना चाहिए क्योंकि अपीलीय न्यायालय बाद की घटनाओं को ध्यान में रखने का हकदार है। विद्वान वकील के अनुसार, यह इस स्तर पर है जब इस न्यायालय द्वारा अपील पर निर्णय लिया जाना है, हमें पूर्व-निर्धारितकर्ता के अधिकार को देखना होगा कि वह इसे बरकरार रखता है या नहीं। दूसरी ओर, वादी-मूल्यांकर्ता के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि वादी को ट्रायल कोर्ट की डिक्री तक बिक्री को रोकने के अपने अधिकार को बनाए रखने की आवश्यकता थी और इसका कोई परिणाम नहीं होगा अगर अपील के लंबित रहने के दौरान पूर्व-अनुभव का उक्त अधिकार खो गया हो। तर्क के समर्थन में, विद्वान वकील ने *रामजी लाल बनाम पंजाब राज्य*[2] मामले में इस न्यायालय के पूर्ण पीठ के फैसले पर भरोसा किया। इस न्यायालय के उक्त पूर्ण पीठ के निर्णय के विरुद्ध एक अपील उच्चतम न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गई थी और इसे *पंजाब राज्य बनाम रामजी लाल*[3] के रूप में रिपोर्ट किया गया है। विद्वान वकील ने भगवान *दास बनाम चेत राम* [4] और रीखी राम बनाम राम कुमार[5] *पर* भी भरोसा किया।

5. जैसा कि पहले देखा गया है, निर्णय लिया जाने वाला मुख्य प्रश्न यह है कि इस अपील के लंबित रहने के दौरान सह-हिस्सेदार होने के नाते पूर्व-नियोक्ता के अधिकारों पर क्या प्रभाव पड़ता है?

6. *रामजी लाई के मामले* (सुप्रा) में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ के फैसले

[2] 1966 पी.एल.आर.345
[3] ए.आई.आर.1971 एस.सी.1228.
[4] ए.आई.आर.1971 एस.सी.369.
[5] ए.आई.आर.1971 एस.सी.1869.

में, ट्रायल कोर्ट द्वारा पप्री-ऐम्प्टर के मुकदमे का फैसला सुनाया गया था। इसमें प्रतिवादियों द्वारा प्रथम अपील के लंबित रहने के दौरान, राज्य सरकार ने पंजाब पूर्व-अनुभव अधिनियम, 1913 की धारा 8(2) के तहत एक अधिसूचना जारी की, जिसमें यह घोषणा की गई कि अनुसूची में वर्णित भूमि की बिक्री के संबंध में पूर्व-अनुभव का कोई अधिकार मौजूद नहीं होगा। प्री-एम्पीटर्स ने इस न्यायालय में एक सिविल रिट याचिका के माध्यम से उक्त अधिसूचना को चुनौती दी। एकल न्यायाधीश के संदर्भ पर मामले को पूर्ण पीठ के पास भेजा गया जहां तीन प्रश्नों पर विचार किया गया। इसमें प्रश्न संख्या 1 विवाद को निर्धारित करने के लिए उचित है और अन्य दो प्रश्नों पर ध्यान देने की आवश्यकता नहीं है। इसमें लिखा है, -

> "क्या एक पूर्व-मूल्यांकनकर्ता जिसके पक्ष में प्रथम न्यायालय में पूर्व-निर्णय दिया गया है, को डिक्री के खिलाफ प्रतिवादी द्वारा अपील की सुनवाई तक पूर्व-अनुभव का बेहतर अधिकार बनाए रखना चाहिए और क्या वर्तमान मामले में डिक्री के खिलाफ अपील के लंबित रहने के दौरान जारी की गई आक्षेपित अधिसूचना, याचिकाकर्ताओं (पूर्व-दोषकर्ताओं) के पूर्व-अनुभव के पहले से ही प्रयोग किए गए अधिकार को सफलतापूर्वक छीन ती है ताकि अपील में उनके मुकदमे को हराया जा सके?"

पूर्ण पीठ द्वारा उक्त प्रश्न के पहले भाग का उत्तर यह था कि पूर्व-अनुभव कानून में यह एक स्थापित नियम है कि एक पूर्व-समर्थक को केवल पहली अदालत की डिक्री की तारीख तक अपनी योग्यता बनाए रखनी चाहिए, चाहे वह डिक्री मुकदमे को खारिज कर दे या इसे डिक्री कर दे और उसकी योग्यता का नुकसान, चाहे वह अपने स्वयं के कार्य से हो या उसके नियंत्रण से परे किसी कार्य द्वारा, उसे डिक्री की तारीख के बाद मुकदमे में उसके दावे के भाग्य को प्रभावित नहीं करता है। एक पूर्व-निर्वासी, जिसके पक्ष में प्रथम न्यायालय द्वारा पूर्व-पूर्व आदेश दिया गया है, को तब तक पूर्व-अनुभव के अपने श्रेष्ठ अधिकार को बनाए रखने की

आवश्यकता नहीं है, जब तक कि प्रतिवादी द्वारा अपील की सुनवाई नहीं हो जाती। पंजाब प्री-एम्प्शन एक्ट की धारा 8 के तहत एक अधिसूचना, जो डिक्री के खिलाफ अपील के लंबित रहने के दौरान जारी की गई है, पहले से ही इस्तेमाल किए गए पूर्व-अनुभव के अधिकार को नहीं छीनती है ताकि उसके मुकदमे को हराया जा सके। उक्त पूर्ण पीठ मामले में, इस संबंध में भरोसा मुख्य रूप से ज़हूर दीन बनाम *जलाल दीन* [6] लाहौर उच्च न्यायालय के पूर्व पूर्ण पीठ के फैसले पर रखा गया था । *जलाल दीन।* (6) वह फिर से एक ऐसा मामला था जहां वादी-पूर्व-याचिकाकर्ता के मुकदमे को ट्रायल कोर्ट द्वारा खारिज कर दिया गया था। डिक्री के खिलाफ अपील के आदेश के दौरान, वेन्डी ने अपनी स्थिति में सुधार किया ताकि पूर्व-समर्थक के बराबर हो और इस प्रकार, पूर्व-समर्थक के बेहतर अधिकार को पराजित करना चाहता था। इस प्रकार, यह ऐसा मामला नहीं था जहां वादी-पूर्व-समर्थक ने उस आधार पर अपना अधिकार खो दिया था, जिसके आधार पर उसने बिक्री को रोकने के लिए दावा किया था। इस प्रकार, उक्त मामले में मुख्य विवाद यह था कि क्या अपील के लंबित रहने के दौरान अपनी स्थिति में सुधार करके वादी-पूर्व-मूल्यांकनकर्ता के पूर्व-अनुभव के बेहतर अधिकार को कम किया जा सकता है। इस संदर्भ में उक्त मामले में यह कहा गया था कि इसमें कोई संदेह नहीं है कि एक व्यक्ति के लिए यह संभव है कि वह अपने खिलाफ मुकदमे के निर्णय के समय तक अपनी स्थिति में प्रभावी ढंग से सुधार करे और इसे खारिज कर दे यदि सुधार के कारण वह पूर्व-समर्थक के बराबर या स्थिति में श्रेष्ठ हो जाता है। लेकिन उस तारीख को बढ़ाना संभव नहीं है जिसके द्वारा वेंडी पहली बार के न्यायालय द्वारा मुकदमे के निर्णय की तारीख से परे अपनी स्थिति में सुधार कर सकता है और इसलिए, अपील के लंबित रहने के दौरान स्थिति में सुधार करके पूर्व-दावेदार के अधिकार को पराजित नहीं कर सकता है, जब पूर्व-पूर्व मुकदमे में पहले न्यायालय का निर्णय, जिसके खिलाफ अपील को प्राथमिकता दी गई थी, चाहे गुण-दोष के आधार पर दिया गया था या नहीं।

[6] आई अल आर(1944) 25 लाहौर 443.

इस प्रकार, इसमें यह माना गया था कि अपील के लंबित रहने के दौरान अपनी स्थिति में सुधार करके पूर्व-निर्धारित करने के अधिकार को प्रतिज्ञाकारी द्वारा पराजित नहीं किया जा सकता है। उस उद्देश्य के लिए, *terminus quo* तारीख थी जब ट्रायल कोर्ट ने डिक्री पारित की थी। उक्त मामले में, पूर्ण पीठ इस तथ्य से भी पूरी तरह अवगत थी कि ट्रायल कोर्ट द्वारा डिक्री पारित करने के बाद हुई बाद की घटनाओं को अपीलीय न्यायालय द्वारा अपील पर फैसला करते समय ध्यान में रखा जा सकता है। यह आयोजित किया गया था, -

> "इसमें कोई संदेह नहीं है, अदालतें अक्सर मुकदमा दायर करने के बाद होने वाली घटनाओं पर ध्यान देती हैं और कभी-कभी अपीलीय चरण के दौरान भी हुई ऐसी घटनाओं के आधार पर राहत के लिए अनुरोध को शामिल करने के लिए दलीलों में संशोधन करने की अनुमति देती हैं, लेकिन यह आमतौर पर कार्यवाही की बहुलता से बचने के लिए किया जाता है या जब मूल राहत के दावे में, परिक्रम में परिवर्तन के कारण, अनुचित हो जाता है और तब नहीं जब वादी का मुकदमा प्रस्तावित संशोधन द्वारा पूरी तरह से विस्थापित हो जाएगा और उसके द्वारा एक नया मुकदमा सीमा के तहत प्रतिबंधित कर दिया जाएगा, हालांकि उन मामलों में जहां यह इतना प्रतिबंधित नहीं होगा, अलग-अलग विचार सामने आ सकते हैं और एक अलग दृष्टिकोण संभव हो सकता है। आम तौर पर एक अपीलीय न्यायालय केवल ऐसे अधिकारों को प्रभावी कर सकता है जो वाद के निपटारे से पहले अस्तित्व में आए थे और जिन्हें ट्रायल कोर्ट निपटाने के लिए सक्षम था। अपील का दायरा आमतौर पर ट्रायल कोर्ट के फैसले सही है या नहीं का पता लगाने के लिए सीमित होना चाहिए। यह इस बात का अनुसरण करेगा कि ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित डिक्री के बाद हुई घटनाओं को एक अपीलीय न्यायालय द्वारा, सफल पार्टी को वंचित रखने के लिए , या वो पार्टी जो सफल हो सकती थी, जो उसके पक्ष में था या होना चाहिए था। इसमें कोई संदेह नहीं है कि आदेश 41

> नियम 33 (सिविल प्रक्रिया संहिता) द्वारा अपीलीय न्यायालय को प्रदत्त शक्तियां बहुत व्यापक हैं; लेकिन उनका उपयोग इस तरह से नहीं किया जा सकता है कि वे सीमा के कानून के आधार पर एक निहित अधिकार को प्रभावित कर सकें और इसी तरह एक अधिकार जिसे ट्रायल कोर्ट द्वारा उसके पक्ष में पारित डिक्री द्वारा एक निर्धारित व्यक्ति में निहित घोषित किया गया था।

उपरोक्त पूर्ण पीठ मामले में शामिल मुख्य प्रश्न यह था कि क्या एक अपील के लंबित रहने के दौरान वेंडी अपनी स्थिति में सुधार कर सकता है, जबकि पूर्व-पूर्व मुकदमे में ट्रायल कोर्ट का निर्णय, जिसके खिलाफ उसे प्राथमिकता दी गई थी, उसकी शर्तों पर बर्खास्तगी का था? प्री-ऐम्प्टर के विद्वान वकील द्वारा एक भी मामले का हवाला नहीं दिया गया है. जहां एक प्री-ऐम्प्टर ने उस आधार पर बिक्री को रोकने का अपना अधिकार खो दिया था, जिसके आधार पर उसने अपील के लंबित रहने के दौरान पूर्व अनुभव के अपने बेहतर अधिकार का दावा किया था और तब भी, वह ट्रायल कोर्ट द्वारा उसके पक्ष में पारित डिक्री को बनाए रखने का हकदार था। इस प्रकार, भेद काफी स्पष्ट है। वर्तमान एक ऐसा मामला है जहां सह-हिस्सेदार होने के नाते पूर्व-अनुभव के बेहतर अधिकार का दावा करने वाले वादी-पूर्व-समर्थक ने खुद अपने स्वयं के कार्य और आचरण से पूर्व-अनुभव का अपना बेहतर अधिकार खो दिया है क्योंकि वह अपील के लंबित रहने के दौरान विभाजन किए गए *खता* में सह-हिस्सेदार नहीं था। वादी-प्रतिवादी के विद्वान वकील द्वारा भरोसा किए गए अन्य फैसलों में भी वर्तमान मामले के तथ्यों के लिए कोई प्रयोज्यता नहीं है।

7. *भगवान दास के मामले* (सुप्रा) में, वादी द्वारा मुकदमे की भूमि पर किरायेदार होने के नाते पूर्व-अनुभव के अधिकार का दावा किया गया था। चूंकि प्रतिवादियों के कहने पर उसके खिलाफ निष्कासन आदेश पारित किया गया था, इसलिए उसे मुकदमा भूमि से बेदखल कर दिया गया था। नतीजतन, उन्होंने धारा 15 (१) (ए) के तहत क़ब्ज़े का दावा पूर्व-अनुभव के आधार पर किया गया था, चौथा, पंजाब पूर्व अनुभव अधिनियम,

1913। उक्त मुकदमा ट्रायल कोर्ट द्वारा खारिज कर दिया गया था, लेकिन अपील में फैसला सुनाया गया था। निचली अपीलीय अदालत के फैसले और डिक्री की पुष्टि इस न्यायालय द्वारा दूसरी अपील में की गई थी। उच्चतम न्यायालय के समक्ष प्रतिवादियों की अपील पर, लॉर्डशिप द्वारा यह माना गया था कि सफल होने के लिए पूर्व-समर्थक को न केवल मकान मालिक द्वारा भूमि की बिक्री के समय, बल्कि मुकदमा शुरू करने के समय और ट्रायल कोर्ट द्वारा मुकदमे में डिक्री पारित करने के समय अधिकार होना चाहिए। दूसरे शब्दों में, उसकी किरायेदारी बरकरार रहनी चाहिए और उसे डिक्री की तारीख तक किरायेदार के रूप में अपनी क्षमता में भूमि को धारण करना चाहिए। रिखी राम के मामले (सुप्रा) में सुप्रीम कोर्ट के लॉर्डशिप द्वारा निर्धारित कानून भी इसी प्रभाव से था , जहां वादी ने अपने मुकदमे के लंबित रहने के दौरान बिक्री को रोकने का अधिकार खो दिया था। इसमें यह माना गया था कि जहां पूर्व-मूल्यांकन के लिए एक मुकदमे के लंबित होने के दौरान किरायेदार को बेदखल करने का आदेश प्राप्त होता है, किरायेदार पहले से खाली करने का अपना अधिकार खो देता है और वह पूर्व-अनुभव के लिए डिक्री प्राप्त नहीं कर सकता है।

8. अपीलकर्ता के वकील ने *अमरजीत कौर बनाम प्रीतम सिंह* [7],के आधार पर यह तर्क दिया कि एक अपील फिर से सुनवाई है; इसलिए बाद की घटनाओं को अपीलीय अदालत द्वारा अपील का निपटारा करते समय ध्यान में रखा जा सकता है।

[7] 1974 पी अल जे 486.

उक्त मामले में, अपीलकर्ता ने सुप्रीम कोर्ट के समक्ष पंजाब प्री-एम्प्शन (निरसन) अधिनियम, 1973 के प्रावधानों के मद्देनजर उच्च न्यायालय द्वारा पारित डिक्री जिस में अपील को ख़ारिज किया गया है की शुद्धता को चुनौती दी थी। इसमें यह कहा गया था कि एक अपील पर फिर से सुनवाई होती है। यदि उच्च न्यायालय अपील को खारिज कर देता है, तो यह एक मुकदमे में डिक्री पारित करना होगा। यदि उच्च न्यायालय को किसी मुकदमे में डिक्री को ख़ारिज करना होता है, तो वह अपनी खुद की डिक्री पारित करता है। अपील की अदालत के पास वही शक्तियां होती हैं और वह लगभग वही कर्तव्य निभाती है जो मूल अधिकार क्षेत्र की अदालतों को प्रदान होते हैं। अपील की सुनवाई पुन: सुनवाई की प्रकृति में प्रक्रियात्मक कानून के तहत है और अपील की अदालत उन तथ्यों और घटनाओं को भी ध्यान में रखने की हकदार है जो डिक्री अपील के बाद अस्तित्व में आए हैं। इस प्रकार, उक्त मामले में उच्च न्यायालय द्वारा पारित डिक्री की पुष्टि की गई थी।

9. जगदीश सिंह बनाम दलीप सिंह[8] मामले में, इस न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा यह माना गया था कि पहले से ही प्री-ऐम्प्टर को यह दिखाना होगा कि उसे बिक्री की तारीख और मुकदमे की तारीख पर पूर्व-अनुभव का अधिकार था, जो अधिकार ट्रायल कोर्ट की डिक्री की तारीख तक जारी रहना चाहिए और उस तारीख से आगे नहीं। उक्त मामले में, विक्रेता संयुक्त भूमि में सह-हिस्सेदार था, जिसमें से उसने एक विशिष्ट खसारा नंबर बेचा था। ट्रायल कोर्ट के फैसले और डिक्री के खिलाफ अपील के लंबित होने के दौरान, जहां वादी-पूर्व-दावेदार मुकदमा खारिज कर दिया गया था, वेंडी द्वारा यह दलील दी गई थी कि मुकदमे के लंबित रहने के दौरान संयुक्त भूमि का विभाजन किया गया था, जिसके परिणामस्वरूप, विक्रेता और पूर्व-नियोक्ता सह-हिस्सेदार नहीं रह गए थे और इस तरह पूर्व-नियोक्ता को सह-हिस्सेदार के रूप में पूर्व-अनुभव का अधिकार समाप्त हो गया और, इसलिए, उस स्कोर पर अपील खारिज कर दी जाए। हालांकि, इसमें एक तथ्य के रूप में पाया गया कि कोई विभाजन नहीं था और यदि कोई विभाजन था, तो यह

[8] 1982 पी एल आर 677

नाबालिग वादी पर बाध्यकारी नहीं था और इस तरह उसके अधिकारों को प्रभावित नहीं करता था। तथापि, उसमें निम्नलिखित टिप्पणियां भी की गई थीं -

"तर्कों के लिए यह माना गया है, कि उपरोक्त आदेश द्वारा किया गया विभाजन नाबालिग वादी पर बाध्यकारी था, फिर भी मेरा विचार है कि विभाजन के इस तरह के आदेश से वादी के पूर्व-अनुभव की मांग करने का अधिकार नहीं छीना जा सकता है। यह अब तक अच्छी तरह से स्थापित हो चुका है कि एक प्री-ऐम्प्टर को यह दिखाना होगा कि उसे बिक्री की तारीख पर एवम् वाद की तारीख़ पर पूर्व-अनुभव का अधिकार था जो की ट्रायल कोर्ट की डिक्री की तारीख तक जारी रहना चाहिए और उससे आगे नहीं।

तथापि, उपर्युक्त मामले में पूर्व के निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, उक्त टिप्पणियां *ओबिटर डिक्टा* की प्रकृति की थीं। यह जोड़ा जा सकता है कि यदि अपीलीय स्तर पर न्यायालय बाद की घटनाओं पर विचार करने का हकदार है, तो उस स्थिति में, यदि अपील के लंबित होने के कारण, वादी-पूर्व-मूल्यांकनकर्ता ने अपने स्वयं के कार्य और आचरण से सह-हिस्सेदार होने के नाते बिक्री को रोकने का अधिकार खो दिया है, तो, वह किसी और को दोष नहीं देगा और उस स्थिति में, वह मुकदमा भूमि में सह-हिस्सेदार होने के नाते पूर्व-अनुभव डिक्री का हकदार नहीं है।

10. नतीजतन, यह अपील सफल होती है और अनुमति दी जाती है। नीचे दिए गए न्यायालयों के निर्णय और डिक्री को रद्द कर दिया जाता है और वादी के मुकदमे को लागत के रूप में बिना किसी आदेश के खारिज कर दिया जाता है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

अनमोल कक्कड़

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

(Trainee Judicial Officer) करनाल, हरियाणा